DOI: 10.51220/hjssh.v6i1.9

Himalayan J. Soc.Sci. & Humanities Vol- 6 pp.69 -74, December, 2011, ISSN. 0975 - 9891

नागार्जुनः एक जनवादी काव्य के पुरोधा

गुड्डी बिष्ट
हिन्दी विभाग
हे0न0ब0ग0 केन्द्रीय विश्वविद्यालय, पौड़ी परिसर

Received:26-10-2011 **Revised:19-11-2011** **Accepted:29-12-2011**

ABSTRACT

प्रस्तुत शोध पत्र में कवि नागार्जुन के जनवादी कवित्व का वर्णन किया गया है। नागार्जुन वामपंथी विचारधारा से प्रेरित है, वे वर्ग संघर्ष और द्वन्दात्मक ऐतिहासिक दृष्टि से भलीभांति परिचित हैं तथा उपेक्षित, दलित एवं शोषित जन समुदाय के पक्षधर हैं भ्रष्टाचार, आडम्बर, साम्प्रदायिकता तथा रुढ़ियों के प्रति आपके मन में तीव्र आक्रोश है, वास्तविकता यह है कि नागार्जुन का काव्य उनका भोगा हुआ यथार्थ है।

Key-words: नागार्जुन, जनवादी कवित्व, विश्लेषण।

जन-जन के प्रति हार्दिक संवेदना का कवि बौद्धिक सहानुभूति तो रखता ही है किन्तु उस हार्दिक संवेदनशीलता को विरला ही कवि समाज के सामने रख पाया है। शत्-शत् नमन उस जन कवि को जो हिन्दी साहित्य में बाबा कहलाने का अधिकारी है, कहना न होगा कि रचनाकार परिस्थियों का सहभोक्ता होता है अतः उसका जीवन-बोध अधिक प्रासंगिक और गहरा होता है। उसकी प्रखर सामाजिक चेतना यथार्थ का साक्षात्कार करती है और युगानुरूप जीवन मूल्यों को तलाशती हुई मानवीय सम्भावनाओं को पहचानती है, जिस रचनाकार में वास्तविक जीवन सत्य को उद्घाटित करने की जितनी क्षमता होगी वह जन जीवन के उतने ही निकट होगा। सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति रचनाकार को जनवादी संस्त्रति के व्यापक धरातल से जोड़ती है अतः वह पीड़ितों का पक्षधर होता है, क्योंकि मात्र अनुरंजन, उपदेश या प्रचार से सार्थक सर्जन की मनोभूमि तैयार नहीं होती। रचनाकार की वैचारिकता हमें संघर्ष क्रान्ति और नव निर्माण की ताकत देती है। मनुष्य को केन्द्र में रखकर लिखी जाने वाली रचना जीवन्त आस्था और सप्राणता का प्रतीक होती है, अतः युगीन हलचलों, वैषम्यों और जटिलताओं से स्वयं गुजरा हुआ रचनाकार जन मानस को जितना स्पर्श कर सकता है उतना सिद्धान्तों का बघार लगाने वाला सतही और रटन्त-उद्घोषक-साहित्यकार नहीं।

उपर्युक्त सभी कसौटियों पर यदि नागार्जुन के काव्य को कसा जाय तो उनके काव्य में बहुरंगी जीवन की समाजपरक यथार्थ भूमि के दर्शन होते दिखाई देते हैं। नागार्जुन वामपंथी विचारधारा से प्रेरित हैं। वर्ग संघर्ष और द्वन्द्वात्मक ऐतिहासिक दृष्टि से भलीभाँति परिचित हैं, उपेक्षित, दलित, शोषित जन समुदाय के पक्षधर हैं, पूँजीवादी व्यवस्था के घोर विरोधी हैं और क्रान्तिकारी शक्तियों के साथ विकासोन्मुख चेतना के समर्थक हैं। भ्रष्टाचार, आडम्बर, साम्प्रदायिकता, भाषावाद और रूढ़ियों के प्रति उनके मन में तीव्र आक्रोश है। वास्तविकता यह है कि नागार्जुन का काव्य उनका अपना भोगा हुआ यथार्थ है। उनमें अनुभूति की प्रामाणिकता है, वे

©SHARAD

विविध आन्दोलनों के सहकर्मी रहे हैं और अभावों में जिए हैं, यही कारण है कि वे हमारे देश के मजदूर किसानों का सांस्कृतिक प्रतिनिधित्व करते हुए भावनात्मक प्रतिनिधित्व भी करते हैं वे हमारे उतने ही निकट हैं जितने कि प्रेमचन्द, निराला, रेणु आदि रहे हैं। उनकी रचनाएँ तत्कालीन समाज लोक जीवन और विविध आन्दोलनों का ऐतिहासिक दस्तावेज बन गई हैं।

वे देश के हालातों का प्रतिबिम्ब हैं प्रेमचन्द के बाद शायद कवि नागार्जुन ही ऐसे हैं जिनकी खण्ड-खण्ड कविताओं में भी समकालीन भारतीय समाज और संस्कृति का सिलसिलेवार इतिहास मिल सकता है। लोकचित्त में जो सामूहिक संवेगों वाली प्रतिक्रिया होती है, उसमें जो तात्कालिकता और जीवन्तता, सादगी और स्पष्टता तेजी और तल्खी, मोह-भ्रम और मोह भंग, चुनौती और व्यथा व्यंग्य और फूहड़ता होती है वह सब नागार्जुन ने सर्वाधिक भोगी है और अपनी कविताओं में अभिव्यक्त की है।(1)

नागार्जुन की पक्षधरता बहुत स्पष्ट है, वे जनवादी कवि हैं, जन-जन के कवि हैं और कलाकार की प्रतिबद्धता के हिमायती हैं क्योंकि कवि 'युग के विप्लव उत्ताप की इस परिधि से' बाहर नहीं रह सकता।

इतर साधारणजनों से अहलाद होकर रहो मत,
कलाधर या रचयिता होना नही पर्याप्त है
पक्षधर की भूमिका धारण करो
विजयिनी जनवाहिनी का पक्षधर होना पड़ेगा
अगर तुम निर्माण करना चाहते हो
जीर्ण संस्कृति को अगर सप्राण करना चाहते हो।(२)

(तालाब की मछलियाँ, पृ0-67)

जनता के पक्ष में कविताऐं लिखने वाले अन्य कवि भी हैं किन्तु जनता को अपने में आत्मसात कर कविता लिखने वाले नागार्जुन अपने ढंग के अकेले कवि हैं। जनता के जीवन में हर क्षण हर दिन घटने वाला यथार्थ नागार्जुन की कविता का यथार्थ है, तात्कालिक प्रतिक्रिया को कविता में प्रत्यक्ष करने वाली कवि दृष्टि ऐतिहासिक यथार्थ के गहरे बोध या विवेक का परिणाम है। प्रतिहिंसा को स्थायी भाव कहने वाले नागार्जुन सरीखे कवि के मूल्यांकन के लिए हमें नये मानदण्डों की अति आवश्यकता है -

देखोगे सौ बार मरूंगा,
देखोगे सौ बार जिऊंगा
हिंसा मुझसे थर्रायेगी
मैं तो उसका खून पिऊंगा
प्रतिहिंसा ही स्थाई भाव है मेरे कवि का
जन-जन में जो ऊर्जा भर दे,
मैं उद्‌गाता हूँ उस कवि का।(3)

(हजार-हजार बाहों वाली-नागार्जुन, पृ0-11)

प्रगतिशील कविता के दौर में अपनी जनोन्मुख संवेदना और सहज लोक धार्मिता के कारण नागार्जुन की कविता ने एक महत्वपूर्ण पहचान बनाई है। नागार्जुन सर्वहारा वर्ग के कवि हैं। हरिजनगाथा, खिचड़ी विप्लव देखा, कविता संग्रह आदि अनेक कविताओं के माध्यम से कवि ने जन-जन की पीड़ा को उजागर किया है जो पूर्णतः सत्य भी है। हिन्दी में निराला के बाद ऐसा जनकवि दूसरा नहीं है। वे सामाजिक बुराइयों, सपने, आशा, आकांक्षा एवं विषम परिस्थितियों के कवि हैं इतना ही नहीं बाबा स्वप्न एवं मोहभंग के भी कवि हैं। उनका अन्तिम कविता संग्रह है 'भूल जाओ सपने' क्योंकि उत्तर आधुनिक साम्राज्यवाद की संस्कृति ने हमें स्वप्नहीन बना दिया है। नागार्जुन ने पहले ही समाजवाद के स्वप्न, जनतंत्र के स्वप्न और आकांक्षा को आईना दिखाया है और यथार्थ को समग्ररूप से उजागर किया है।

महाकवि कालिदास एवं मैथिल को किला विद्यापति का प्रभाव नागार्जुन पर रहा है और उनका काव्य यथार्थ की पोथी है जिसमें सब खुला ही है आक्रोश का यह कवि जब प्रस्तुति की कविता लिखता है तो काफी भावुक दिखाई देता है क्योंकि बादलों को देखकर उसका हृदय मचलने लगता है कालिदास को लक्ष्य कर उन्होंने एक प्रसिद्ध कविता 'बादल को घिरते देखा' लिखी जिसमें प्रतिपादित किया गया है कि कवि का व्यतित्व अपने भोगे हुए यथार्थ का प्रतिफल होता है, कवि कालिदास से सीधा प्रश्न करता है -

कालिदास सच-सच बतलाना/इंदुमती के मृत्यु शोक से,
अज रोया या तुम रोये थे/शिवजी की तीसरी आँख
से/निकली हुई महाज्वाला से/घृतमिश्रित सूखी समिधासम/
कामदेव जब भस्म हो गया/रति का क्रंदन सुन आँसू से/
तुमने ही तो दृग धोये थे/कालिदास
सच-सच बतलाना/रति रोई या तुम रोये थे?

प्रकृति पर आधारित प्रसिद्ध कविता 'बादल को घिरते देखा है' में नागार्जुन पर कालिदास और विद्यापति का गहरा प्रभाव दृष्टिगत होता है -

अमल धावल गिरि के शिखरों पर/बादल को,
घिरते देखा है/छोटी-छोटी मोती-जैसे/उसके शीतल
तुहिन कणों को/मानसरोवर के उन स्वर्णिम/कमलों पर
गिरते देखा है/बादल को घिरते देखा है।

यहाँ पर कवि रामटेक पर खड़े अभिशप्त यक्ष की भाँति सपनों में खोया अमल धावल गिरि-शिखरों के आस-पास तिरते मंडराते मेघों की छटा निहार रहा है। मोती जैसे तुहिन कण और मानसरोवर के स्वर्णिम कमल, संस्कृत काव्य के स्वप्न बिम्ब उसकी आँखों में कौंध रहे हैं लेकिन तुरन्त ही वह यथार्थ से धरती पर लौटता है-

कहाँ गया धनपति कुवेर वह,
कहाँ गयी उसकी वह अलका,
ढूँढा बहुत परन्तु लगा क्या
मेघदूत का पता कहीं पर
कौन बताए वह छायामय
बरस पड़ा होगा न यहीं पर
जानें दो वह कवि कल्पित था
मैंने तो भीषण जाड़े में
नभ चुंबी कैलाश शीर्ष पर
महामेघ को झां झानिल से,
गरज-गरज भिड़ते देखा है।
बादल को घिरते देखा है।

लोक जीवन का सूक्ष्माति सूक्ष्म अध्ययन और लोक मंगल की जो अनूठी शैली है वही सब उनकी कविता का विषय बनकर सामने आई। 'अकाल' और 'अकाल के बाद' में नागार्जुन जब अपनी कविता को परोसते हैं तो वही कविता समूची बीसवीं सदी की हिन्दी कविता के लिए एक चुनौती बनकर खड़ी होती है। अकाल की भयावह स्थिति को यह जनकवि अपनी लेखनी से मानो सम्पूर्ण व्यष्टि एवं समष्टि की व्यथा को उजागर कर रहा हो-

कई दिनों तक चूल्हा रोया चक्की रही उदास,
कई दिनों तक कानी कुतिया सोयी घर के पास
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त।

घर में 'अकाल' के पड़ने पर घर का मनुष्य ही नहीं बल्कि उस घर में रहने वाले अनेक प्राणी जगत, उस घर में रेगने वाली वह छिपकली भी, जो कई दिनों तक दीपक न जलने पर कीट पतंगे नहीं खा सकी इत्यादि सभी प्रभावित होते हैं वह कवि मन कितना पारखी होगा जो सूक्ष्म प्राणियों के सम्बन्ध में भी उतनी ही सहानुभूति रखता है जितना कि मनुष्य मात्र के प्रति लगाव। 'अकाल के बाद' नामक कविता में कवि मानों उन भूखे लोगों के पेट की आग की ज्वाला को उतना ही महसूस करता है और अन्न के घर में आ जाने से कितना उल्लास कायम होता है। इस यथार्थ बोध को बाबा कहते हैं -

दाने आये घर के अन्दर बहुत दिनों के बाद,
धुँआ उठा आँगन के उपर बहुत दिनों के बाद
चमक उठी घर भर की आँखे बहुत दिनों के बाद
कौए ने खुजलाई पाँखे बहुत दिनों के बाद।

नागार्जुन कविता में लोक चेतना की अभिव्यक्ति करने वाले अद्‌भुत कवि हैं, किसी भी रचनाकार का प्रमुख उद्‌देश्य होता है कि वह जनता के दु:ख-दर्द से जुड़े और उस कवि में एक साथ दो संस्कार थे। पहले वह भाषा से जुड़ता है और फिर परम्परा से भाषा को प्राप्त कर अपनी क्षमता से उसे सम्बद्ध करता है। दूसरा अनुभव जो वह समाज से प्राप्त करता है और उसे फिर अपनी लेखनी के बल पर समाज में परोसता है। कहना न होगा कि नागार्जुन जन सहकार, लोक चेतना के उन्नायक के रूप में जिस परिवेश में स्वयं रहे हैं उसी परिवेश की चिन्ता उन्हें सालती रही समाज की तमाम विद्रूपताओं पर अपने काव्य के माध्यम से उन्होंने करारा व्यंग्य किया है। समाज का कोई वर्ग और कोई भी कोना नागार्जुन की लेखनी से अछूता नहीं रहा है। समाज की भद्‌दी तसवीर को भी सच्ची नीयत से पेश करना नागार्जुन की बड़ी विशेषता रही है। आम आदमी से अलग रहना उन्हें रास नहीं आता है और वे कहते हैं -

आम जन से अलग होकर ना रहो जन!
पक्षधर की भूमिका धारण करो।।

सर्वहारा वर्ग पर उनका जितना भी लेखन है वह उन्होंने उधार नहीं लिया बल्कि उनकी अपनी अनुभूति का पक्ष था। नागार्जुन का पूरा साहित्य प्रखर सामाजिक चेतना की अभिव्यक्ति है और उनके व्यंग्य का लक्ष्य व्यक्ति विशेष नहीं बल्कि समाज की दुष्प्रवृत्तियाँ, विकृतियाँ हैं। उन पर कुठाराघात करने का आशय है-सुधार। वे स्वच्छ प्रशासन और जनतंत्र के हिमायती हैं। नागार्जुन उन क्रान्तिवीरों का अभिनन्दन करना नहीं भूलते जो चुपचाप पोस्टर चिपकाते हैं, बन्धन-मोक्ष का त्यौहार मनाते हैं, शोषण से मुक्ति का आवाश्न करते हैं और यह घोषणा करते हैं कि -

मशीनों पर और श्रम पर, उपज के सब साधनों पर,
सर्वहारा स्वयं अपना करेगा, अधिकार स्थापित
दूहकर वह आँत जोंको की मिटा देगा धारा की प्यास
करेगा आरम्भ अपना, स्वयं ही इतिहास।

(तालाब की मछलियाँ, पृ0-03)

नागार्जुन ने 'धरती का अनहद फासला' नापते हुए रिक्शा वाले के कुलिश कठोर फटी बिवाइयों वाले खुरदरे पैर' भी बड़ी हमदर्दी से देखे हैं, गंगा मइया में मल्लाहों के नंग-धड़ंगे छोकरों को फुर्ती से पैसे खोजते देखा है, माघ की ठिठुरन के बीच गठरी बने हुए मजदूर के नाक हीन मुखड़े को देखा है, गूँगी के भीतर की पीड़ा को समझा है, रोते चूल्हे और उदास चक्की को निरखा है।

अकल्पनीय तथ्य है कि कितनी महानता होगी इस जन कवि में जिसने ड्रामों के मजदूर को भी देखा और रानी विक्टोरिया पर भी प्रहार किया है। थके माँदे धूल-धुँआ युक्त पसीने से लथपथ श्रमिकों के साथ ट्राम में सटकर बैठने वाले 'दूध से धुले सादे लिवास में सफेदपोशों से कवि का प्रश्न है-'जी तो नहीं कुढ़ता है? घिन तो नहीं आती है? अपने को आधुनिक नारी कहने वाली और 'विज्ञापन सुन्दरी' कविता में बिकने वाली स्त्री की विवशता का व्यंग्यात्मक चित्रण है कहाँ-कहाँ जाना पड़ा? कै-कै बार? जैसे प्रश्नों में सारे संकेत बोल उठे हैं। नागार्जुन का कवि यह कभी सहन नहीं कर सका कि भूख से पीड़ित निर्धन देश में उपनिवेशवादी शोषकों के

सम्मान में पैसा बहाया जाएँ। रानी ऐलिजाबेथ के आने पर देश में हो रहे अपव्यय का विरोध करते हुए उनकी कविता के माध्यम से करूणा मिश्रित व्यंग्य पूरी ताकत के साथ उभरकर सामने आया है -

बेबस-बेसुध, सूखे-रूखड़े,
हम ठहरे तिनकों के टुकड़े
टहनी हो तुम भारी भरकम डाल की
खोज खबर तो लो अपने भक्तों के खास महाल की।
लो कपूर की लपट
आरती लो सोने की थाल की
आओ रानी हम ढोएँगे पालकी।

(प्यासी पथराई आँखे, पृ0-58)

कवि की दृष्टि अन्तर्राष्ट्रीय सर्वहारा पर है। पकी सुनहली फसलें, रंग विरंगे फूल, वास्तव में कृषक की साधना का प्रतिफल है। खलियानों में उनके पसीने की बूँदे मुसकाती हैं। इस नये निर्माण और विकास में उसकी तेजस्वी आभा को नहीं भुलाया जा सकता। यह है श्रमिक और उसकी श्रम-साधना का जयगान-

नए गगन में नया सूर्य जो चमक रहा है,
यह विशाल भू-खण्ड आज जो दमक रहा है
मेरी भी आभा है उसमें।

(प्यासी पथराई आँखे, पृ0-47)

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि मिट्टी से जुड़ा यह कवि जन-जन के मन का कवि है स्वयं भोगे हुए यथार्थ को समाज के समक्ष परोसता है और वास्तविकता से कभी विलग नहीं रहा। जो भी लिखा उसमें सच्चाई एवं पारदर्शिता थी, समाज के प्रत्येक वर्ग को उसकी नीयत के अनुसार फटकारा एवं दुलारा है। समाज की तमाम विकृतियों को लेखन के माध्यम से उजागर किया ऐसा सच्चा साहित्यकार जब संसार से विदाई लेकर गया तो एक युग की समाप्ति थी।

सन्दर्भ सूची

1. रमेश कुन्तक मेघ, क्योंकि समय का शब्द है, पृष्ठ सं0-426
2. नागार्जुन, तालाब की मछलियाँ, पृष्ठ सं0-67
3. नागार्जुन, हजार-हजार बाहों वाली , पृष्ठ सं0-11
4. नागार्जुन: प्रतिनिधि कविताऐं, सम्पादित वेदप्रकाश, पीपुल्स पब्लिसिंग हाउस (प्रा0लि0)।